सामूहिक प्रार्थना

सम्पादक

श्री. शिवाजी न. भावे

सर्व-सेवा-संघ-प्रकाशन

राजघाट, वाराणसी

प्रार्थना का आदर्श

सारी प्रार्थनाओं का सार यही है कि हम अपने-अपने दिल में ईश्वर को बसा लें।

हर साँस के साथ राम-राम निकले, इस स्थिति को पहुँचना प्रार्थना का आदर्श है।

व्यक्तिगत प्रार्थना से ही सामूहिक प्रार्थना की प्रथा आरम्भ हुई। यदि व्यक्ति को ही सामूहिक प्रार्थना की प्यास न हो, तो वह समूह को कैसे महसूस होगी ? सामूहिक प्रार्थना का उपयोग व्यक्ति के हित के लिए ही है। आत्मदर्शन और आत्म-शुद्धि के लिए व्यक्ति को सामूहिक प्रार्थना से मदद मिलेगी।

- मो. क. गांधी

प्रार्थना कैसे करें ?

गांधीजी ने प्रार्थना चलायी। उससे गांधीजी को स्फूर्ति मिलती थी। हमने तो प्रार्थना का 'रूटीन' (दैनिक क्रम) बना डाला है। प्रार्थना के पहले हमें तैयार होना चाहिए। मौन रखकर शान्त बैठना चाहिए। जो बोला जायगा, उसीका चिन्तन करना चाहिए। लेकिन उस वक्त नहीं। तब तो मंत्र का उच्चारण होना चाहिए। लेकिन उल्टा होता है । जैसे वह चीज रोज-रोज बोली जाती है, तो हमारी वाणी से सिर्फ शब्द निकलते हैं, लेकिन हमारा ध्यान नहीं रहता। हम सिर्फ मंत्र बोलते हैं । ऐसा नहीं होना चाहिए। मंत्र के साथ और भजन भी चाहिए। इतना ही नहीं, भजन बदलने भी चाहिए। इस तरह चलेंगे, तो हम बचेंगे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय पुरुषोत्तमाय ।

प्रातःस्मरण

जागिये रघुनाथ ककुँवर, पंछी बन बोले ॥ध्रु॥
चन्द्र-किरण शीतल भयी, चकई पिय मिलन गयी,
त्रिविध मंद चलत पवन, पल्लव द्रुम डोले॥
प्रात भानु प्रगट भयो, रजनी को तिमिर गयो,
भृङ्ग करत गुंज-गान, कमलन दल खोले॥
ब्रह्मादिक धरत ध्यान, सुर-नर-मुनि करत गान,
जागन की बेर भयी, नयन पलक खोले॥
तुलसिदास अति अनंद, निरखि के मुखारविंद,
दीनन को देत दान, भूषन बहुमोले॥

ॐ असतो मा सद् गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्माऽमृतं गमय॥

भगवति तव तीरे नीरमात्राशनोऽहम् ।
विगतविषयतृष्ण: कृष्णमाराधयामि ॥
सकल कलुष भंगे ! स्वर्ग सोपान संगे !
तरलतर तरंगे ! देवि गंगे प्रसीद॥

ॐ भूर्भुव: स्व: ॐ तत्सवितुर्वरेण्यम्।
भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो न: प्रचोदयात् ।

प्रात: स्मरामि हृदि संस्फुरद् आत्म-तत्त्वम्
सत्-चित्-सुखं परमहंस-गति तुरीयम्।
यत् स्वप्न-जागर-सुषुप्तम् अवैति नित्यम्
तद् ब्रह्म निष्कलम् अहं न च भूत-संघ: ॥ १॥

प्रातर भजामि मनसो वचसाम् अगम्यम्
वाचो विभान्ति निखिलां यद् अणुग्रहेण।
यन् 'नेति-नेति' वचनैर् निगमा अवोचुसृ
तं देव-देवम् अजम् अच्युतम् आहुर् अग्रयम् ॥ २॥

प्रातर नमामि तमस: परम् अर्क-वर्णम्
पूर्णं सनातन-पदं पुरुषोत्तमाख्यम्।
यस्मिन् इदं जगद् अशेषम् अशेष-मुर्तौ
रज्ज्वां भुजंगम इव प्रतिभासितं वै॥ ३॥

समुद्रवसने ! देवि ! पर्वत-स्तन-मण्डले।
विष्णु-पत्नि! नमस् तुभ्यम्, पाद-स्पर्श क्षमस्व मे ॥ ४॥

या कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवला या शुभ्र वस्त्रावृता
या वीणा-वरदण्ड-मण्डित-करा या श्वेत-पद्मासना ।
या ब्रह्माऽच्युत-शंकर-प्रभृतिभिर् देवै: सदा वन्दिता
सा मां पातु सरस्वती भगवती नि:शेष जाड्यापहा॥ ५॥

वक्र-तुण्ड । महाकाय ! सूर्य-कोटि-सम-प्रभ !
निर्विघ्नं कुरु मे देव ! शुभ कार्येषु सर्वदा॥ ६॥

गुरुर् ब्रह्मा, गुरुर् विष्णुर् गुरुर् देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्री गुरवै नमः ॥ ७॥

शान्ताकारं भुजग-शयनं पद्म-नाभं सुरेशम्
विश्वाधारं गगन-सदृशं मेघ-वर्ण शुभाङ्गम्।
लक्ष्मी-कान्तं कमल-नयनं योगिभिर् ध्यान-गम्यम्
वन्दे विष्णुं भव-भय-हर सर्व-लोकैक-नाथम् ॥ ८ ॥

कर-चरण-कृतं वाक्-कायजं कर्मजं वा
श्रवण-नयनज वा मानसं वाऽपराधम्।
विहितम् अविहितं वा सर्वम् एतत् क्षमस्व
जय-जय करुणाब्धे! श्रीमहादेव! शम्भो ॥ ९॥

न त्वहं कामये राज्यम् न स्वर्गं नापुनर्भवम्।
कामये दुःख-तप्तानाम् प्राणिनाम् आर्ति-नाशनम् ॥ १०॥

स्वस्ति प्रजाभ्य, परिपालयन्ताम्
न्यायेन मार्गेण महीं महीशाः ।

गो-ब्राह्मणेभ्यः शुभम् अस्तु नित्यम्;
लोकाः समस्ताः सुखिनो भवन्तु ॥ ११॥

नमस् ते सते ते जगत्-कारणाय
नमस् ते चिते सर्व-लोकाश्रयाय।

नमोऽद्वैत-तत्त्वाय मुक्ति-प्रदाय

नमो ब्रह्मणे व्यापिने शाश्वताय ॥ १२॥

त्वम् एकं शरण्यं त्वम् एकं वरेण्यम्

त्वम् एकं जगत्-पालकं स्व-प्रकाशम् ।

त्वम् एकं जगत कर्तृ-पातृ-प्रहर्तृ

त्वम् एकं परं निश्चलं निर्विकल्पम् ॥ १३॥

भयानां भयं,भीषणं भीषणानाम्

गति: प्राणिनां, पावनं पावनानाम्।

महोच्चै: पदानां नियंतृ त्वम् एकम्

परेषां परं, रक्षणं रक्षणानाम् ॥१४॥

वयं त्वां स्मरामो, बयं त्वां भजामो

वयं त्वां जगत्-साक्षि-रूपं नमाम:।

सद् एकं निधानं निरालंबम् ईशम्

भवाम्भोधि-पोतं शरण्यं व्रजाम: ॥१५॥

प्रातःकालीन प्रार्थना

ॐ पूर्णम् अद: पूर्णम् इदम्
पूर्णात् पूर्णम् उदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय
पूर्णण् एव अवशिष्यते ॥
ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:

प्रातःकालीन प्रार्थना

ॐ पूर्ण है वह, पूर्ण है यह,
पूर्ण से निष्पन्न होता पूर्ण है।
पूर्ण में से पूर्ण को यदि लें निकाल
शेष तब भी पूर्ण ही रहता सदा।
ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:

ईशावास्य-उपनिषद्

१. ॐ ईशावास्यम् इदं सर्वं
यत् किं च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:
मा गृध: कस्य स्विद् धनम्॥

२. कुर्वन् एव इह कर्माणि
जिजीविषेत् शतं समा:।
एवं त्वयि न अन्यथा इत: अस्ति
न कर्म लिप्यते नरे॥

३. असुर्या: नाम ते लोका:
अन्धेन तमसा आवृता:।
तांस् ते प्रेतय अभिगच्छन्ति
ये के च् आत्महन: जना: ॥

४. अनेजद् एकं मनसः जवीय:
न एनद् देवा: आप्नुवन् पूवंम् अर्षत् ।

ईशावास्य-उपनिषद्

१.हरि: ॐ ईश का आवास यह सारा जगत्,
जीवन यहाँ जो कुछ उसीसे व्याप्त है।
अतएव करके त्याग उसके नाम से
तू भोग कर उसका, तुझे जो प्राप्त है।
धन की किसीके भी न रख तू वासना।

२. करते हुए ही कर्म इस संसार में
शत वर्ष का जीवन हमारा इष्ट हो।
तुझ देहधारी के लिए पथ एक यह,
अतिरिक्त इससे दूसरा पथ है नहीं।
होता नहीं है लिप्त मानव कर्म से,
उससे चिटकती मात्र फल की वासना।

३. मानी गयी हैं योनियाँ जो आसुरी,
छाया हुआ जिनमें तिमिर घनघोर है,
मुड़ते उन्हीं की ओर मरकर वे मनुज
जो आत्मघातक शत्रु आत्मज्ञान के।

४.चलता नहीं, फिरता नहीं, है एक ही
वह आत्मतत्त्व सवेग मन से भी अधिक,

तद् धावतः अन्यान् अत्येति तिष्ठत्
तस्मिन् अपः मातरिश्वा दधाति॥

उसको कहीं भी देव धर पाते नहीं,
उनको कभी का वह स्वयं ही है धरे।
वह उन सभीको, दौड़ते जो जा रहे,
ठहरा हुआ भी छोड़ पीछे ही गया।
वह है तभी तो संचरित है प्राण यह,
जो कर रहा क्रीड़ा प्रकृति की गोद में।

५. तद् एजति तत् न एजति
तद् दूरे तद् उ अन्तिके।
तद् अन्तरस्य सर्वस्य
तद् उ सर्वस्व अस्य बाह्यत: ॥

५.वह चल रहा है और वह चलता नहीं,
वह दूर है, फिर भी निरन्तर पास है।
भीतर सभीके बस रहा सर्वत्र ही,
बाहर सभीके है तदपि वह सर्वदा।

६. यः तु सर्वाणि भूतानि
आत्मनि एव अनुपश्यति।
सर्वभूतेषु च आत्मानं
तत: न विजुगुप्सते॥

६. जब जो निरन्तर देखता है, भूत सब
आत्मस्थ ही हैं और आत्मा दीखता
सम्पूर्ण भूतों में जिसे, तब वह पुरुष
ऊबा किसीके प्रति नहीं रहता कहीं

७. यस्मिन् सर्वाणि भूतानि
आत्मा एव अभूद् विजानतः।
तत्र क: मोह: क: शोक:
एकत्वम् अनुपश्यत: ॥

७. ये सर्वभूत हुए जिसे हैं आत्ममय
एकत्व का दर्शन निरन्तर जो करे,
तब उस दशा में उस सुधीजन के लिए
कैसा कहाँ क्या मोह, कैसा शोक क्या?

८. सः पर्यगात् शुक्रम् अकायम् अव्रणम्
अस्नाविरं शुद्धम् अपापविद्धम् ।
कवीर् मनीषी परिभू: स्वयंभू:
याथातथ्यत: अर्थान् व्यदधात् शाश्वतीभ्य: समाभ्य: ॥

८. सब ओर आत्मा घेरकर, आत्मज्ञ को
है बैठ जाता, प्राप्त कर लेता उसे
जो तेज से परिपूर्ण है, अशरीर है,
यों मुक्त है तनु के व्रणादिक दोष से
त्यों स्नायु आदिक देहगुण से भी रहित

जो शुद्ध है, बेधा नहीं अघ ने जिसे।
वह क्रान्तदर्शी कवि, वशी, व्यापक, स्वतन्त्र,
सब अर्थ उसके सध गये हैं ठीक से,
सुस्थिर रहेंगे जो चिरन्तन काल में।

९. अन्धं तम: प्रविशन्ति
ये अविद्याम् उपासते।
ततः भूय: इव ते तम:
य उ विद्यायां रता:॥

९. जो जन अविद्या में निरन्तर मग्न हैं,
वे डूब जाते हैं घने तमसान्ध में।
जो मनुज विद्या में सदा रममाण हैं,
वे और घन तमसान्ध में मानो धँसे।

१०. अन्यद् एवं आहुर् विद्यया
अन्यद् आहुर् अविद्यया।
इति शुश्रुम धीराणां
ये नस् तद् विचचक्षिरे ॥

१०. यह आत्मतत्त्व विभिन्न विद्या से कथित,
एवं अविद्या से कथित है भिन्न वह।
यह तत्य हमने धीर पुरुषों से सुना,
जिनसे हुआ उस तत्त्व का दर्शन हमें।

११. विद्यां च अविद्यां च
यस् तद् वेद उभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा
विद्या अमृतम् अश्नुते॥

११. विद्या, अविद्या इन उभय के साथ में
हैं जानते जो मनुज आत्मज्ञान को,
इसके सहारे तर अविद्या से मरण
वे प्राप्त विद्या से अमृत करते सदा।

१२.अन्धं तम: प्रविशन्ति
ये असंभूतिम् उपासते।
तत: भूय: इव ते तम:
य उ संभूत्यां रता: ॥

१२.जो मनुज करते हैं निरोध-उपासना,
वे डूब जाते हैं घने तमसान्ध में।
जो जन सदैव विकास में रममाण हैं,
वे और घन तमसान्ध में मानो धँसे ।

१३. अन्यद् एव आहु: संभवाद्
अन्यद् आहुर् असंभवात्।
इत शुश्रुम धीराणां

१३. वह आत्मतत्त्व विकास से है भिन्न ही
कहते उसे एवं विभिन्न निरोध से ।
यह तथ्य हमने धीर पुरुषों से सुना,

ये नस् तद् विचचक्षिरे॥

१४. संभूतिं च विनाशंच
यस् तद् वेद उभयं सह।
विनाशेन मृत्युं तीर्त्वा
संभूत्या अमृतम् अश्नुते॥

१५. हिरण्मयेन पात्रेण
सत्यस्य अपिहितं मुखम्।
ततू त्वं पूषन्
अपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ॥

१६. पूषन् एकर्षे यम सूर्य,
प्राजापत्य, व्यूह रश्मीन् समूह।
तेज: यत् ते रूपं कल्याणतमं तत् ते पश्यामि
यः असौ असौ पुरुष: सः अहम् अस्मि॥

१७. वायुर् अनिलम् अमृतम्
अथ इदम् भस्मान्तं शरीरम्।
ॐ क्रतो समर कृतं समर
क्रतो समर कृतं स्मर॥

जिनसे हुआ उस तत्त्व का दर्शन हमें ।

१४. ये जो विकास-निरोध, इन दो के सहित
हैं जानते जो मनुज आत्मज्ञान को
इसके सहारे मरण पैर निरोध से
पाते सदैव विकास के द्वारा अमृत।

१५. मुख आवरित है सत्य का उस पात्र से
जो हेममय है, विश्व-पोषक हे प्रभो,
मुझ सत्यधर्मा के लिए वह आवरण
तू दूर कर, जिससे कि दर्शन कर सकूँ।

१६. तू विश्वपोषक है तथा तू ही निरीक्षक एक है,
तू कर रहा नियमन तथा तू ही प्रवर्तन कर रहा
पालन सभीका हो रहा तुझसे प्रजा की भाँति है
निज पोषणादिक रश्मियाँ तू खोलकर मुझको दिखा,
फिर से दिखा एकत्र त्यों हो जोड़ करके तू उन्हें।
अब देखता हूँ रूप तेरा तेजयुत कल्याणतम,
वह जो परात्पर पुरुष है, मैं हूँ वही।

१७. यह प्राण उस चेतन अमृतमय तत्त्व में
हो जाय लीन, शरीर भस्मीभूत हो।
ले नाम ईश्वर का अरे संकल्पमय
तू स्मरण कर उसका किया तू स्मरण कर
संन्यस्त करके सर्वथा संकल्प निज
हे जीव मेरे, स्मरण करता रह उसे।

१८. अग्ने नय सुपथा राये अस्मान्
विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोधि अस्मद् जुहुराणम् एन:
भूयिष्ठां ते नम उक्ति विधेम॥
ॐ पूर्णम् अद: पूर्णम् इदम्
पूर्णात् पूर्णम् उदच्यते।
पूर्णस्य पूर्णम् आदाय
पूर्णम् एव अवशिष्यते॥
ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:

१८. हे मार्गदर्शक दीप्तिमन्त प्रभो, तुझे
हैं ज्ञात सारे तत्त्व जो जग में ग्रथित ।
ले जा परम आनन्दमय की ओर तू
ऋजु मार्ग से, हमको कुटिल अघ से बचा।
फिर-फिर विनय नत नम्र वचनों से तुझे,
फिर-फिर विनय नत नम्र वचनों से तुझे॥
ॐ पूर्ण है वह, पूर्ण है यह
पूर्ण से निष्पन्न होता पूर्ण है।
पूर्ण में से पूर्ण को यदि लें निकाल
शेष तब भी पूर्ण ही रहता सदा।
ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:

नाम-माला

ॐ तत्सत् श्रीनारायण तू, पुरुषोत्तम गुरु तू।
सिद्ध बुद्ध तू स्कन्द विनायक, सविता पावक तू॥
ब्रह्म मज्द तू, यह शक्ति तू, ईशु-पिता प्रभु तू।
रुद्र विष्णु तू, राम कृष्ण तू, रहीम ताओ तू॥
वासुदेव गो विश्वरूप तू, चिदानन्द हरि तू।
अद्वितीय तू, अकाल निर्भय, आत्म-लिंग शिव तू॥

पारसी गाथा

यथा अहू वइर्यो
अथा रतुश अषात् चीतू हचा।

वङ्हँउश दज्दा मनङ् हो

ष्य ओथननाँम् अङ्हँउश् मज्दाइ।

क्षथ्रँम्चा अहुराइ आ यिम्

द्रिगुव्यो ददत् वास्तारेंम्॥

जैन प्रार्थना

णमो अरिहंताणम्। णमो सिद्धाणम्

णमो आइरियाणम्। णमो उवज्झायाणम्।

णमो लोए सव्व साहूणम्॥

सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः ॥

बौद्ध प्रार्थना

नं म्यो हो रें गे क्यो।

सब्ब पापस्स अकरणं कुसलस्स उपसंपदा।

सचित्त-परियोदपनं एतं बुद्धानुसासनम् ॥

इस्लामी प्रार्थना

अऊजू बिल्लाहि मिनश् शैत्वानिर् रजीम॥

बिस्मिल्लाहिर् रहमानिर् रहीम।

अलहम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन।

आर् रहमानिर् रहीमि

मालिकि यौ मिद्दीन्।

ईय्याक न अ्बुदु व ईय्याक नस्तईन्।

इह्दि नस्सिरात्वल मुस्तकीम।

सिरात्वल लजीन अनअम्त अलैहिम्।

गैरिल् मग्दूबूबि अलैहिम् वलद् द्वॉल्लीन्॥

आमीन ॥

ईसाई प्रार्थना

पड़ोसियों पर प्रेम करें। शत्रु पर भी प्रेम करें । परस्पर प्रेम करें।

सिख प्रार्थना

एक ओंकार सत नाम

कर्ता पुरुष, निर्भौ निर्वैर

अकाल मूरत अजूनि सैभं गुर प्रसादि॥

जप आदि सच जुगादि सच

है भी सच, नानक! होसी भी सच।

अयि नंदतनूज किंकरं पतितं मां विषमे भवांबुधौ ।

कृपया तव पादपंकज-स्थित धूली सद्दशं विभावय ॥

बार बार वर मांगऊं हर्षि देहु श्रीरंग।

पदसरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग॥

ॐ सहनाववतु

सह नौ भुनकतु ।

सहवीर्यं करवावहै ।

तेजस्विनावधीतम् अस्तु।

मा विद्विषावहै ।

ॐ शान्ति: शान्ति: शान्ति:

एकादश व्रत

अहिंसा सत्य अस्तेय ब्रह्मचर्य असंग्रह।
शरीरश्रम अस्वाद सर्वत्र भयवर्जन ॥
सर्वधर्म-समानत्व स्वदेशी स्पर्शभावना।
विनम्र व्रत-निष्ठा से ये एकादश सेव्य हैं।

•

सायंकालीन प्रार्थना	**सायंकालीन प्रार्थना**
यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुत: स्तुन्वन्ति दिव्यै: स्तवैर- वेदै: सांगपदक्रमोपनिषदै: गायन्ति यं सामगा:। ध्यानावस्थितद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो यस्यान्तं न विदु: सुरासुरगणा देवाय तस्मै नम: ॥	यं ब्रह्मा वरुणेन्द्ररुद्रमरुत: स्तुन्वन्ति दिव्यै: स्तवैर्- वेदै: सांगपदक्रमोपनिषदै: गायन्ति यं सामगा:। ध्यानावस्थिततद्गतेन मनसा पश्यन्ति यं योगिनो यस्यान्तं न विदु: सुरासुरगणा देवाय तस्मै नम: ॥
स्थितप्रज्ञ-लक्षण	**स्थितप्रज्ञ के लक्षण**
अर्जुन उवाच	**अर्जुन ने कहा**
१. स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव। स्थितधी: कि प्रभाषेत किम् आसीत् व्रजेत किम् ॥	१. स्थितप्रज्ञा समाधिस्थ कहते कृष्ण हैं किसे ? स्थितधी बोलता कैसे, बैठता और डोलता॥
श्री भगवान् उवाच	**श्री भगवान् ने कहा**
२. प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान्। आत्मनि एव आत्मना तुष्ट: स्थितप्रज्ञ: तदा उच्यते ॥	२. मनोगत सभी काम तज दे जब पार्थ जो, आपमें आप हो तुष्ट, सो स्थितप्रज्ञ है तभी।
३. दुःखेषु अनुद्विग्नमना: सुखेषु विगतस्पृह:। वीतरागभयक्रोध: स्थितधी: मुनि: उच्यते॥	३. दुःख में जो अनुद्विग्न, सुख में नित्य नि:स्पृह, वीतराग-भय-क्रोध, मुनि है स्थित-धी वही।

४. यः सर्वत्र अनभिस्नेहः तत् तत् प्राप्य शुभाशुभम्। न अभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥	४. जो शुभाशुभ को पा के न तो तुष्ट न रुष्ट है, सर्वत्र अनभिस्नेही, प्रज्ञा है उसकी स्थिरा।
५. यदा संहरते च अयं कूर्मः अङ्नानि इव सर्वशः। इन्द्रियाणि इन्द्रियार्थेभ्यः तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥	५. कूर्म ज्यों निज अंगों को, इन्द्रियों को समेट ले सर्वशः विषयों से जो , प्रज्ञा है उसकी स्थिरा।
६. विषयाः विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः। रसवर्ज रसः अपि अस्य परं दृष्ट्वा निवर्तते॥	६. भोग तो छूट जाते हैं निराहारी मनुष्य के, रस किंतु नहीं जाता, जाता है आत्म-लाभ से ।
७. यततः हि अपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः । इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः।	७. यत्नयुक्त सुधी की भी इन्द्रियाँ ये प्रमत्त जो, मन को हर लेती हैं अपने बल से हठात्
८. तानि सर्वाणि संयस्य युक्तः आसीत मत्परः। वशे हि यस्य इन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥	८. इन्हें संयम से रोके, मुझीमें रत, युक्त हो, इन्द्रियाँ जिसने जीतीं, प्रज्ञा है उसकी स्थिरा।
९.ध्यायतः विषयान् पुंसः सङ्गः तेषु उपजायते॥ सङ्गात् सञ्जायते कामः कामात् क्रोधः अभिजायते ॥	९. भोग-चिन्तन होने से होता उत्पन्न संग है, संग से काम होता है, काम से क्रोध भारत।
१०.क्रोधात् भवति संमोहः संमोहात् स्मृतिविभ्रमः। स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशः बुद्धिनाशात् प्रणश्यति॥	१०. क्रोध से मोह होता है, मोह से स्मृतिविभ्रम, उससे बुद्धि का नाश, बुद्धिनाश विनाश है,
११.रागद्वेषवियुक्तैः तु विषयान् इन्द्रियैः चरन्। आत्मवश्यैर् विधेयात्मा प्रसादम् अधिगच्छति॥	११. रागद्वेष-परित्यागी करे इन्द्रिय-कार्य जो, स्वाधीन वृत्ति से पार्थ, पाता अत्मप्रसाद सो।
१२. प्रसादे सर्वदुःखानां हानिः अस्य उपजायते। प्रसन्नचेतसः हि आशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते॥	१२. प्रसाद-युत होने से छूटते सब दुःख हैं, होती प्रसन्नचेता की बुद्धि सुस्थिर शीघ्र ही।
१३. न अस्ति बुद्धिः अयुक्तस्य न च अयुक्तस्य भावना। न च अभावयतः शान्तिः अशान्तस्य कुतः सुखम्॥	१३. नहीं बुद्धि अयोगी के, भावना उसमें कहाँ अभावन कहाँ शान्त, कैसे सुख अशांत को ?
१४. इन्द्रियाणां हि चरतां यत् मनः अनुविधीयते। तद् अस्य हरति प्रज्ञां वायुर् नावम्: इव अम्भसि।	१४. मन जो दौड़ता पीछे इन्द्रियों के विहार में खींचता जन की प्रज्ञा, जल में नाव वायु ज्यों।
१५. तस्माद् यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।	१५. अतएव महाबाहो, इन्द्रियों को समेट ले

इन्द्रियाणि इन्द्रियार्थेभ्य: तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥	सर्वथा विषयों से जो, प्रज्ञा है उसकी स्थिरा।
१६. या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी। यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यत: मुने: ॥	१६. निशा जो सर्व भूतों की, संयमी जागते वहाँ जागते जिसमें अन्य, वह तत्त्वज्ञ की निशा।
१७.आपूर्यमाणम् अचलप्रतिष्ठम् समुद्रम् आप: प्रविशन्ति यद्वत्। तद्वत कामा: यं प्रविशन्ति सर्वे स: शान्तिम् आप्नोति न कामकामी ॥	१७. नदीं-नदों से भरता हुआ भी, समुद्र हैं ज्यों स्थिर सुप्रतिष्ठ, त्यों काम, सारे जिसमें समावें पाता वही शान्ति, न काम-कामी ।
१८. विहाय कामान् य: सर्वान पुमान् चरति नि:स्पृह: ॥ निर्मम: निरहङ्कार: स: शान्तिम् अधिगच्छति॥	१८. सर्व-काम परित्यागी विचरे नर निःस्पृह, अहंता-ममता-मुक्त, पाता परम् शान्ति सो ।
१९. एषा ब्राह्मी स्थिति: पार्थ न एनां प्राप्य विमुह्यति ॥ स्थित्वा अस्याम् अन्तकाले अपि ब्रह्मनिर्वाणम् ऋच्छति ॥	१९. ब्राह्मीस्थिति यही पार्थ, इसे पाके न मोह है, टिकती अन्त में भी है ब्रह्मनिर्वाण-दायिनी।

[प्रात: की भाँति ही सायंकालीन प्रार्थना में भी स्थितप्रज्ञ-लक्षण के बाद नाम-माला, नाम-धुन और एकादश व्रत का पाठ किया जाता है।]

नाम धुन

१. नारायण नारायण जय गोविन्द हरे।
नारायण नारायण जय गोपाल हरे॥

२. राजाराम राम राम। सीताराम राम राम।

३. पतित जनों को करो पुनीता।
हे राम सीता हे कृष्ण-गीता ॥

४. पतित-पावना रामा। पतित पावना रामा॥

५. राम राम राम राम। सीताराम सीताराम ।

६. जय जय राम कृष्ण हरि।
जय जय राम कृष्ण हरि॥

७. भज गोविन्दं भज गोविन्दं। भज गोविन्दं मूढ़मते ॥

८. राधाकृष्ण जय कुंजबिहारी ।
मुरलीधर गोवर्धनधारी ।

हिन्दी भजन

१

हे जग-त्राता, विश्व-विधाता,
हे सुख-शान्ति-निकेतन हे !
प्रेम के सिन्धो, दीन के बन्धो,
दुःख-दरिद्र-विनाशन हे!
नित्य, अखंड, अनंत, अनादि,
पूरण ब्रह्म, सनातन, हे!
जग-आश्रय, जग-पति, जग-बंदन,
अनुपम, अलख, निरंजन हे!
प्राणसखा, त्रिभुवन-प्रतिपालक,
जीवन के अवलंबन हे!

२

काम कोह मद मान न मोहा।
लोभ न छोभ न राग न द्रोहा॥
जिन्हकें कपट दम्भ नहिं माया।
तिन्हकें हृदय बसहु रघुराया॥
सबके प्रिय, सबके हितकारी।
दुख-सुख सरिस प्रसंसा गारी॥
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी।
जागत सोवत सरन तुम्हारी॥
तुमहिं छाड़ि गति दूसरि नाहीं।
राम बसहु तिन्हके मन माहीं॥
जननी-सम जानहिं परनारी।
धनु पराव बिषतें बिष भारी॥
जे हरषहिं परसंपति देखी।
दुखित होहिं परविपति बिसेषी॥
जिन्हहिं राम तुम्ह प्रान पिआरे।
तिन्हके मन सुभ सदन तुम्हारे ॥
स्वामि सखा पितु मातु गुरु,
जिन्हके सब तुम्ह तात।
मन-मन्दिर तिन्हकें बसहु,
सीय सहित दोउ भ्रात॥

३

सुनहु सखा, कह कृपा-निधाना।
जेहिं जय होइ, सो स्यन्दन आना॥
सौरज धीरज तेहि रथ चाका।
सत्य सील दृढ़ ध्वजा पताका॥
बल बिबेक दम पर-हित घोरे।
छमा कृपा समता रजु जोरे॥
ईस भजनु सारथी सुजाना।
बिरति चर्म सतोस कृपाना॥
दान परसु बुधि सक्ति प्रचण्डा॥
बर बिग्यान कठिन कोदण्डा॥
अमल अचल मन त्रोन समाना।
सम जम नियम सिलीमुख नाना॥
कवच अभेद बिप्र-गुरु-पूजा।
एहि सम विजय-उपाय न दूजा॥
सखा धर्ममय अस रथ जाके।
जीतन कहँ न कतहुँ रिपु ताके॥
महा अजय संसार-रिपु
जीति सकई सो वीर।
जाकें अस रथ होइ दृढ़,
सुनहु सखा मति-धीर॥

४

यह बिनती रघुबीर गुसाँईं।
और आस बिस्वास भरोसो,
हरौ जीव जड़ताई॥
चहौ न सुगति, सुमति, संपति कछु,
रिधि-सिधि विपुल बड़ाई।
हेतु-रहित अनुराग रामपद बढ़े अनुदिन अधिकाई॥
कुटिल करम लै जाइ मोहिं जहँ-जहँ अपनी बरिआई।
तहँ-तहँ जनि छिन छोह छाँड़ियो कमठ-अण्ड की नाई॥
या जगमें जहँ लगि या तनुकी प्रीति-प्रतीति सगाई।
ते सब तुलसिदास प्रभुही सों होहिं सिमिटि इक ठाँई॥

५

कौन जतन बिनती करिये।
निज आचरन बिचारि हारि हिय, मानि जानि डरिये॥
जेहि साधन हरि ! द्रवहु जानि जन, सो हठि परिहरिये।
जाते विपति-जाल निसिदिन दुख, तेहि पथ अनुसरिये॥
जानत हूँ मन बचन करम पर-हित कीन्हें तरिये।
सो विपरीत देखि परसुख बिनु-कारन ही जरिये॥
स्त्रुति पुरान सबको मत यह सत-संग सुदृढ़ धरिये।
निज अभिमान मोह ईर्षा बस, तिन्हहिं न आदरिये॥

संनत सोइ प्रिय मोहिं सदा जातें भवनिधि परिये।
कहौ अब नाथ, कौन बलतें संसार-सोग हरिये॥
जब कब निज करुना-सुभावतें, द्रवहु तौ निस्तरिये।
तुलसिदास बिस्वास आन नहिं, कत पचि-पचि मरिये॥

६

माधव ! मोह-फाँस क्यों टूटै ?
बाहिर कोटि उपाय करिय, अभ्यन्तर ग्रंथि न छूटै ॥
धृतपूरन कराह अन्तरगत ससि-प्रतिबिम्ब दिखावै।
ईंधन अनल लगाय कलप सत औंटत नास न पावै॥
तरु-कोटर महँ बस बिहंग तरु काटै मरै न जैसे।
साधन करिय विचार-हीन, मन सुद्ध होइ नहिं तैसे।
अंतर मलिन विषय मन अति, तन पावन करिय पखारे ॥
मरइ न उरग अनेक जतन बलमीकि विविध विधि मारे ।
तुलसिदास हरि-गुरु-करुना बिनु विमल विवेक न होई।
बिनु विवेक संसार-घोर-निधि पार न पावै कोई॥

७

नाम को आधार, तेरे नाम को आधारा।
'मेरी' 'मेरी' करत फिरत, दिन ही रैन सारा॥
नजर भर के देख प्रानि धुंद का पसारा॥नाम०॥

मथुरा में जन्म लीनो गोकुला सिधारा।

कंस को निरवंश कीन्हों, मोर मुकुटवाला रे॥ नाम०॥

जमुना में गेंद गिरी, ग्वाल बाल हारा।

कालिनाग नाथ लीन्हो, कृष्ण भयो काला रे॥ नाम०॥

८

अब लौ नसानी, अब न नसैहाँ।

रामकृपा भवनिसा सिरानी, जागे फिरि न डसैहौं॥

पायेउँ नाम चारु चिंतामनि, उर कर तें न खसैहौं।

स्याम रूप सुचि रुचिर कसौटी, चित कंचनहिं कसैहौं ॥

परबस जानि हँस्यो इन इंद्रिन, निज बस ह्वै न हँसैहौं।

मन मधुकर पन कै, तुलसी, रघुपति-पद-कमल बसैहौं ।

९

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।

श्रीरघुनाथ-कृपालु-कृपातें, संत-सुभाव गहौंगो॥

जथालाभ-सन्तोष सदा, काहूसों कछु न चहौंगो।

परहित-निरत निरन्तर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो॥

परुष बचन अति दुसह श्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो।

बिगत-मान, सम सीतल मन, पर-गुन अवगुन न कहौंगो ॥

परिहरि देहजनित चिन्ता दुख-सुख सम-बुद्धि सहौंगो।

तुलसिदास प्रभु यही पथ रहि, अविचल हरि-भगति लहौंगो

१०

जाऊँ कहाँ तजि चरन तुम्हारे ।
काको नाम पतित पावन जग, केहि अति दीन पियारे॥
कौन देव बराइ विरद-हित, हठि-हठि अधम उधारे।
खग-मृग, व्याध पषान, बिटप, जड़ जवन कवन सुर तारे॥
देव, दनुज, मुनि, नाग, मनुज, सब माया-बिबस-बिचारे।
तिनके हाथ दास तुलसी प्रभु कहा अपुनपौ हारे।

११

नाम, राम रावरोई हित मेरे।
स्वारथ परमारथ साथिन्ह सों,
भुज उठाइ कहाँ टेरै॥
जननी-जनक तज्यो जनमि,
करम बिनु बिधिहु सृज्यो अवडेरे।
मोहुँसे कोउ-कोउ कहत रामहिको,
सो प्रसंग केहि केरे॥
फिर्यो ललात बिनु नाम उदर लगि,
दुखउ दुखित मोहि हेरे।
नाम-प्रसाद लहत रसाल-फल,

अब हौं बबुर बहेरे॥
साधक साधु लोक परलोकहिं,
सुनि गुनि जतन घनेरे॥
तुलसी के अवलम्ब नाम को,
एक गाँठि कइ फेरे॥

१२

तू दयालु, दीन हौं, तू दानि, हौं भिखारी।
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पाप-पुंज-हारी ॥
नाथ तू अनाथको, अनाथ कौन मोसों ?
मो समान आरत नहिं, आरत-हर तोसों॥
ब्रह्म तू, हौं जीव, तू ठाकुर, हौं चेरो।
तात, मातु, गुरु, सखा तू, सब बिधि हितु मेरो ।
तोहिं मोहिं नाते अनेक, मानियै जो भावै॥
ज्यों-त्यों तुलसी कृपालु ! चरन-सरन पावै॥

१३

सुने री मैंने, निर्बलके बल राम।
पिछली साख भरूँ संतनकी आड़े सँवारे काम॥
जब लगि गज अपनो बल बरत्यो नेकु सर्यो नहिं काम।

निर्बल ह्वै बल राम पुकार्यो आये आधे नाम।
द्रुपद-सुता निर्बल भइ ता दिन गहलाये निज धाम॥
दुःशासनकी भुजा थकित भइ, बसन रूप भये श्याम ॥
अप-बल तप-बल और बाहु-बल, चौथा बल है दाम ।
सूर किशोर कृपातें सब बल हारेको हरिनाम॥

१४

चरन-कमल बन्दौं हरि राई।
जाकी कृपा पंगु गिरि लंघै, अंधेको सब कछु दरसाई ॥
बहिरो सुनै, मूक पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराई।
सूरदास स्वामी करुनामय, बार-बार बन्दौं तेहि पाई॥

१५

तुम मेरी राखो लाज हरी।
तुम जानत सब अन्तरजामी।
करनी कछु न करी॥
औगुन मोसे बिसरत नाहिं,
पल-छिन घरी-घरी॥
सब प्रपंचकी पोट बाँधि करि
अपने सीस धरी॥
दारा सुत धन मोह लिये हौं

सुधि-बुधि सब बिसरी।

सूर पतितको बेग उधारो,

अब मेरी नाव भरी॥

१६

प्रभु। मोरे अवगुण चितन धरो।

सम-दरसी है नाम तिहारो, चाहे तो पार करो॥

एक नदिया एक नार कहावत, मैलो हि नीर भरो।

जब दोनों मिलि एक बरन भये, सुरसरि नाम पर्यो ॥

इक लोहा पूजामें राखत, इक घर बधिक पर्यो।

पारस-गुण अवगुण नहि चितवत, कंचन करत खरो॥

यह माया भ्रम-जाल कहावत, सूरदास सगरो।

अबकी बेर मोहि पार उतारो, नहिं प्रन जात टरो॥

१७

सबसे ऊँची प्रेम सगाई।

दुर्योधनको मेवा त्यागो साग बिदुर घर खाई॥

जूठे फल सबरीके खाये बहुविधि प्रेम लगाई।

प्रेमके बस नृप-सेवा कीन्हीं आप बने हरि नाई॥

राजसुयज्ञ युधिष्टिर कीनो तामें जूठ उठाई।

प्रेम के बस अर्जुन-रथ हाँक्यो भूलि गये ठकुराई॥

ऐसी प्रीति बढ़ी वृन्दावन गोपिन नाच नचाई।

सूर क्रूर यहि लायक नाहीं कहँ लगि करौं बड़ाई॥

१८

रे मन मूरख ! जनम गँवायो।

करि अभिमान विषय रस राच्यो स्याम-सरन नहिं आयो॥

यह संसार फूल सेमर को सुन्दर देखि भुलायो।

चाखन लांग्यो रुई गई उड़ि, हाथ कछू नहिं आयो॥

कहा भयो अबके मन सोचे, पहिले नाहिं कमायो।

कहत सूर भगवंत भजन बिनु सिर धुनि धुनि पछितायो॥

१९

हे गोविन्द राखो शरण अब तो जीवन हारे।

नीर पीवन हेतु गयो, सिन्धु के किनारे,

सिन्धु बीच बसत ग्राह चरन धरि पछारे ॥

चार प्रहर जुद्ध भयो, ले गयो मँझधारे।

नाक कान डूबन लागे, कृष्णको पुकारे॥

द्वारकामें शब्द गयो, शोर भयो भारे,

शंख चक्र-गदा पद्म, गरुड़ लै सिधारे॥

सूर कहै श्याम सुनो, शरण हैं तिहारे,

अबकी बार पार करो, नंदके दुलारे॥

२०

वृक्षनसे मति ले, मन! तू वृक्षनसे मति ले।
काटे वाको क्रोध न करहीं सिंचत न करहिं नेह॥
धूप सहत अपने सिर ऊपर, औरको छाँह करेत।
जो वाहीको पथर चलावे, ताहीको फल देत॥
धन्य-धन्य ये पर-उपकारी, वृथा मनुजकी देह।
सूरदास प्रभु कहँ लगि बरनैं, हरिजनकी मति ले ॥

२१

घूँघटका पट खोल रे, तोकों राम मिलेंगे!
घट-घट में तेरा साँई रमत है
कटुक वचन मत बोल रे॥
धन-जोबनको गरब ने कीजै
झूठा पचरंग चोल रे॥
सुन्न महलमें दियना बारिले
आसनसों मत डोल रे॥
कहै कबीर अनंद भयो है,
बाजत अनहद ढोल रे॥

२२

सन्तो सहज समाधि भली।

साँई तें मिलन भयो जा दिन तें, सुरत न अनत चली॥

आँख न मूँदूँ, कान न रूँधूँ, काया कष्ट न धारूँ।

खुले नैन मैं हँस-हँस देखूँ, सुंदर रूप निहारूँ॥

कहूँ सो नाम, सुनूँ सो सुमिरन जो कछु करूँ सो पूजा।

गिरह उद्यान एक सम देखूं, भाव मिटाऊँ दूजा।

जहँ-जहँ जाऊँ सोई परिकरमा, जो कछु करूँ सो सेवा।

जब सोऊँ तब करूँ दंडवत, पूजूँ और न देया॥

सब्द निरंतर मनुआ राता, मलिन बचन को त्यागी।

ऊठत-बैठत कबहँ न बिसरै, ऐसी तारी लागी॥

कहै कबीर यह उन्मुनि रहनी, सो परगट कर गाई।

सुख-दुख के इक परे परमसुख, तेहि में रहा समाई॥

२३

झीनी झीनी बीनी चदरिया।

आठ कँवल दल चरखा डोलै

पाँच तत्त, गुन तीनी चदरिया॥

साईको सियत मास दस लागै

ठोंकि-ठोंकिके बीनी चदरिया॥

सो चादर सुर-नर-मुनि ओढ़ी

ओढ़िके मैली कीनी चदरिया॥

दास कबीर जतनसे ओढ़ी

ज्योंकी त्यों धरि दीनी चदरिया॥

२४

मन! तोहे केहि विधि कर समझाऊँ।

सोना होय तो सुहाग मँगाऊँ, बंकनाल रस लाऊँ।

ग्यान शब्द की फूँक चलाऊँ पानी कर पिघलाऊँ॥

घोड़ा होय तो लगाम लगाऊँ, ऊपर जीन कसाऊँ।

होय सवार तेरे पर बैठूँ, चाबुक देके चलाऊँ॥

हाथी होय तो जंजीर गढ़ाऊँ, चारों पैर बँधाऊँ।

होय महावत तेरे पर बैठूँ, अंकुश लेके चलाऊँ॥

लोहा होय तो ऐरण मँगाऊँ, ऊपर धुवन धुवाऊँ।

धूवनकी घनघोर मचाऊँ, जंतर तार खिचाऊँ॥

ग्यानी होय तो ग्यान सिखाऊँ, सत्यकी राह चलाऊँ।

कहत कबीर सुनो भाई साधो, अमरापुर पहुँचाऊँ ॥

२५

दुई जगदीस कहाँ ते आया, कहु कवने भरमाया।

अल्लह-राम करीमा केसौ, हरि हजरत नाम धराया॥

गहना एक कनक तें गढ़ना, इनि महँ भाव न दूजा।

कहन सुनन को दुइ करि थापिन, इक निमाज इक पूजा॥

वही महादेव वही महंमद, ब्रह्मा-आदम कहिये।

को हिन्दू को तुरक कहावै, एक जिमीं पर रहिये॥

वेद-किताब पढ़े वे कुतुबा, वे मौलाना वे पांडे ।

बेगरि-बेगरि नाम धराये, एक मटिया के भाँड़े ॥

कहहिं कबीर वे दूनौं भूले, रामहि किनहूँ न पाया।

वे खस्सी वे गाय कटावैं, बादहि जन्म गँवाया॥

२६

मोको कहां ढूँढ़े बन्दे, मैं तो तेरे पास में।

ना मैं बकरी ना मैं भेड़ी, ना मैं छुरी-गँडासा में ॥

नहीं खाल में नहीं पोंछ में ना हड्डी ना मांस में।

ना मैं देवल ना मैं मसजिंद, ना काबे कैलास में॥

ना तो कौनो क्रिया-कर्म में, नहीं जोग बैराग में।

खोजी होय तौ तुरतै मिलिहौं, पल भर की तालास में ॥

मैं तो रहौं सहर के बाहर, मेरी पुरी मवास में।

कहै कबीर सुनो भाई साधो, सब साँसों की साँस में ॥

२७

हम तो एक एक करि जानां।
दोइ कहैं तिनहीं कौं दोजग, जिन नांहिंन पहिचांनां॥
एकै पवन एक ही पानी, एक जोति संसारा।
एक ही खाक गढ़े सब भांडे, एक ही सिरजनहारा ॥
जैसैं बाढ़ी काष्ठ ही काटै, अगिनि न काटै कोई।
सब घटि अंतरि तूँ ही व्यापक, धरै सरूपैं सोई॥
माया मोहे अर्थ देखि करि, काहे कूँ गरवानां
निरमै भया कछू नहीं व्यापै, कहै कबीर दिवानां ॥

२८

शूर संग्रामको देख भागै नहीं,
देख भागै सोई शूर नाहीं॥
काम औ' क्रोध, मद, लोभसे जूझना
मँडा घमसान तहँ खेत माहीं ॥
शील औ' सौच, संतोष साही भये,
नाम समसेर तहँ खूब बाजे ॥
कहै कबीर कोई जूझिहै शूरमा
कायरा भीड़ तहँ तुरत भाजै ॥

२९

लोका जांनि न भूलौ भाई।
खालिक खलक खलकमें खालिक,
सब घट रह्यौइ समाई॥
अला एकै नूर उपनाया,
ताकी कैसी निंदा।
ता नूर थैं सब जग कीया,
कौन भला कौन मंदा॥
ता अल्ला की गति नहीं जांनी,
गुरि गुड़ दीया मीठा।
कहै कबीर मैं पूरा पाया,
सब घटि साहिब दीठा॥

३०

विसर गई सब तात पराई।
जब ते साध-संगत मोहिं पाई।
ना कोउ बैरी नाहिं बिगाना,
सकल संगि हम कौ बनि आई॥
जो प्रभु कीन्हों सो भल मान्यो,
एक सुमति साधुन तें पाई॥
सब महँ रम रहिया प्रभु एकै,

पेखि पेखि नानक बिगसाई ॥

३१

जो नरु दुख में दुखु नहिं मानै।
सुख सनेहु अरु भै नहिं जाके कंचन माटी मानै॥
नहिं निंदिआ नहि उसतति जाकै लोभु मोहु अभिमाना ।
हरख सोग ते रहै निआरउ, नाहि मान अपमाना॥
आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा।
काम क्रोधु जिह परसै नाहिन, तिह घट ब्रह्म निवासा॥
सुर-किरपा जिह नर कउ कीनि तिह इय जुगति पछानी।
नानक लीन भइओ गोविन्द सिउ जिउ पानी संगि पानी

३२

साधो, मन का मान तिआगो।
काम क्रोध संगति दुरजनकी, ताते अहनिसि भागो ॥
सुखु दुखु दोनों सम करि जानै, औरु मानु अपमाना।
हरख-सोग ते रहै अतीता, तिनि जगि तत्तु पिछाना॥
असतुति निन्दा दोऊ त्यागै, खोजै पदु निरबाना।
जन नानक इहु खेलु कठिन है, किनहू गुरमुखि जाना ॥

३३

काहे रे ! वन खोजन जाई।

सरबनिवासी सदा अलेपा, तोही संगि समाई॥

पुहुपमध्य जिउ बासु बसतु है, मुकुर मांहि जस छाई।

तैसे ही हरि बसे निरन्तर, घट ही खोजहु भाई॥

बाहरि-भीतरि एकै जानहु, इह गुरु गिआनु बताई।

जन नानक बिनु आपा चीन्हें, मिटै न भ्रमकी काई॥

३४

मन मेरो गजु जिहबा मेरी काती।

मपि मपि काटउ जमकी फासी॥

कहा करउ जाती कहा करउ पाती।

राम को नामु जपउ दिन राती ॥ रहाउ ॥

रांगनि रांगड सीरनि सीवउ।

राम नाम बिनु घरीअ न जीवउ॥

भगति करउ हरि के गुन गावउ।

आठ पहर अपना खसमु धिआवउ॥

सुइने की सूई रूपे का धागा।

नामे का चितु हरि सउ लागा।

३५

बहुता करमु लिखिआ न जाइ॥

बड्डा दाता तिलु न तमाइ॥

केते मंगहि जोध अपार॥

केतिआ गणत नहीं वीचारु।

केते खपि तुटहि बेकार॥

केते लै लै मुकरु पाहि।

केते मूरख खाही खाही॥

केतिआ दूख भूख सद मार।

एहि भि दाति तेरी दातार॥

बंदिखलासी भाणै होइ।

होरु आखि न सकै कोइ॥

जे को खाइकु आखणि पाइ।

ओहु जाणै जेती आ मुहि खाई॥

आपै जाणै आपै देइ।

आखहि सिभि केइ केई॥

जिसनो बखसे सिफति सालाह।

नानक पातिसाही पातिसाह ॥

३६

मेरे राणाजी, मैं गोविंद-गुण गाना ॥ध्रु० ॥

राजा रूठे नगरी रक्खे अपनी।

मैं हर रुठ्या कहाँ जाना ?॥

राणे भेज्या जहर पियाला ।

मैं अमृत कह पी जाना॥

डबिया में काला नाग भेजा।

मैं शालग्राम कर जाना॥

मीरां बाई प्रेम दिवानी।

मैं सांवलिया वर पाना॥

३७

नहिं ऐसो जनम बारम्बार।

का जानूँ कछु पुन्य प्रगटे मानुसा अवतार॥

बढ़त पल पल, घटत छिन छिन, जात न लागे बार।

बिरछके ज्यों पात टूटे, लगे नहिं पुनि डार।

भौसागर अति जोर कहिये विषम ओखी धार।

राम नामका बाँध बेड़ा बेगि उतरे पार॥

साधु संत महंत ग्यानी चलत करत पुकार।

दासि मीरां लाल गिरिधर जीवना दिन चार॥

३८

हरि ! तुम हरो जनकी भीर।

द्रौपदीकी लाज राखी, तुरत बढ़ायो चीर॥

भक्त कारन रूप नरहरि, धर्यो आप शरीर।

हरिनकश्यप मारि लीन्हो, धर्यो नाँहिन धीर॥

बूड़तो गजराज राख्यौ, कियो बाहर नीर।

दास मीरां लाल गिरिधर, चरण कँवल पर सीर॥

३९

नाम जपन क्यों छोड़ दिया ?

क्रोध न छोड़ा, झूठ न छोड़ा,

सत्यवचन क्यों छोड़ दिया?

झूठे जगमें दिल ललचाकर

असल वतन क्यों छोड़ दिया?

कौड़ीको तो खूब सम्हाला

लाल रतन क्यों छोड़ दिया?

जिहि सुमिरनते अति सुख पावे

सो सुमिरन क्यों छोड़ दिया?

खालस इक भगवान भरोसे

तन-मन-धन क्यों न छोड़ दिया ?

४०

अब कैसे छूटै नाम-रट लागी।

प्रभुजी तुम चन्दन, हम पानी।

जाकी अँग-अँग बास समानी॥

प्रभुजी तुम घन बन, हम मोरा।

जैसे चितवत चंद चकोरा॥

प्रभुजी तुम दीपक हम बाती।

जाकी जोति बरै दिनराती॥

प्रभुजी तुम मोती हम धागा।

जैसे सोनहिं मिलत सुहागा॥

प्रभुजी तुम स्वामी हम दासा।

ऐसी भक्ति करै रैदासा॥

४१

भेष लियो पै भेद न जान्यो।

अंमृत लेइ विषै सों सान्यो॥

काम क्रोधमें जनम गाँवायो।

साधु-संगति मिलि राम न गायो ॥

तिलक दियो पै तपनि न जाई।

माला पहिरे धनेरी लाई।

कहि रैदास मरम जो पाऊँ।

देव निरंजन संत करि ध्याऊँ ॥

४२

नरहरि, चंचल है मति मेरी।
कैसे भगति करूँ मैं तेरी ॥
तूं मोहि देखै हौं तोहि देखूँ,
प्रीति परस्पर होई।
तूँ मोहि देखे तोहि न देखूँ,
यह मति सब बुधि खोई॥
सब घट अन्तर रमसि निरन्तर,
मैं देखन नहिं जाना।
गुन सब तोर; मोर सब औगुन,
कृत उपकार न माना॥
मैं तैं तोरि-मोरि असमझि सों,
कैसे करि निस्तारा।
कहि रैदास कृस्न करुनामय,
जै जै जगत-अधारा॥

४३

जो तुम तोरौ राम मैं नहिं तोरौं।
तुम सों तोरि कवन सों जोरौं ॥
तीरथ बरत न करौं ऊँदेसा।
तुम्हरे चरनकमलका भरोसा॥
जँह-जँह जावौं तुम्हरी पूजा।
तुम-सा देव और नहिं दूजा॥
मैं अपनो मन हरि सों जोर्‌यो।
हरि सों जोरि सबन सों तोर्‌यो ॥
सबहीं पहर तुम्हारी आसा।
मन क्रम वचन कहै रैदासा॥

४४

ना वह रीझै जप-तप कीन्हें, ना आतम को जारे।
ना वह रीझै धोती टाँगे, ना कायाके पखारे॥
दाया करै, धरम मन राखै, घरमें रहे उदासी।
अपना-सा दुःख सबका जानै, ताहि मिलैं अविनासी ।।
सहै कुसब्द बादहू त्यागै, छाँड़ै गर्व गुमाना।
यही रीझ मेरे निरंकारकी, कहत मलूक दिवाना॥

४५

बाबा, नाहीं दूजा कोई!

एक अनेक नांउं तुम्हारे, मो पै और न होई॥

अलख इलाही एक तूं, तूंही राम रहीम।

तूंही मालिक मोहना, केसौ नांउं करीम॥

सांई सिरजनहार तूं, तूं पावन तूं पाक।

तूं काइम करतार तूं, तूं हरि हाजरी आप॥

रमिता राजिक एक तूं, तूं सारंग सुबहान।

कादिर करता एक तूं, तूं साहिब सुलतान॥

अविगत अल्ल: एक तूं, गनी गुसाईं एक।

अजय अनूपम आप है, दादू नांउं अनेक।

४६

गुरु-कृपांजन पायो मेरे भाई,

राम बिना कछु जानत नाहीं॥

अन्तर रामहि बाहिर रामहि

जहँ देखौं तहँ राम ही राम हि ॥

जागत रामहि सोवत रामहि

सपने में देखौं राजा रामहि॥

एका जनार्दनी भाव ही नीका

जो देखौं सो राम-सरीखा॥

४७

पिरथी परमेसुरकी सारी।

कोई राजा अपने सिरपर, भार लेहु मत भारी॥

पिरथीकै कारणि कैरूँ पांडौ, करते जुद्ध दिनाई॥

मेरी मेरी करि करि मूये, निहचै भई पराई॥

जाकै नौ ग्रह पाइडे बाँधे, कूवै मीच उसारी।

ता रावणकी ठोर न ठहार, गोविन्द गर्व प्रहारी॥

केते राजा राज बईठे, केते छत्र धरेंगे ।

दिन द्वे च्यारि मुकाम भयो है, फिर भी कूँच करेंगे॥

अटल एक राजा अविनासी, जाकी अनन्त लोक दुहाई ।

वषना कहै, पिरथी है ताकी, नहीं तुम्हारी भाई॥

४८

हिरदा बड़ो रे कठोर।

कोटि कियां भीजै नहीं, ऐसो पाहण नाहीं और ॥

गंगा ने गोदावरी न्याहो, कासी पुहकर माँहि रे।

कर्म कापड़ै मैण को, ताथैं रोम भीगो नाहि रे॥

वेद ने भागोत सुनिया कथा सुणी अनेक रे।

कर्म पाखर सारिखा, ताथैं बाण न लागै एक रे ॥

औंधा कलसा ऊपरे, जल बूठो अखंड धार रे।

तत बेला निहालियो, तो पाणी नहीं लगार रे।

ब्रह्म अगनि पाषाण जाल्या, चूना कीया सलेस रे।
वषना भिजोया रामरस, म्हारा सतगुरन आदेस रे।

४९

सोई जन राम कौं भाव हो।
कनक कामिनी परहरै, नहिं आप बँधावै हो॥
सबही सौं निरबैरता, काहू न दुखावै हो।
सीतल बानी बोलिकै, रस अमृत प्यावै हो॥
कै तो मौन गहे रहै, कै हरिगुन गावै हो।
भरम कथा संसार की सब दूरी उड़ावै हो।
पंचौं इन्द्री बसी करै, मंन मनहिं मिलावै हो।
काम क्रोध अरु लोभ कौं खनि खोदि बहावै हो।
चौथा पद कौं चीन्हकैं, ता मांहि समावै हो।
सून्दर ऐसे साधु कै ढिंग काल न आवै हो॥

५०

नाम बिन भाव करम नहिं छूटै ।
साधु संग औ" रामभजन बिन,
काल निरन्तर लूटै।
मल सेती जो मलको धोवै,
सो मल कैसे छूटै?

प्रेमका साबुन नाम का पानी,
दोय मिल तांता टूटै।
भेद अभेद भरमका भाँडा,
चौढ़े पड़-पड़ फूटै।
गुरमुख शब्द गहै उर अन्तर,
रामका ध्यान तूँ धर रे प्रानी,
सकल भरम सौं छूटै।
अमृत का मेंह बूटै।
जन दरियाव अरप दे आपा,
जरा मरन तब टूटै।

५१

ऐसे साधू करम दहै।
अपना राम कबहूँ नहिं बिसरै, बुरी भली सब सीस सहै ॥
हस्ती चलै भूंसैं बहु कूकर, ताका औगुन उर न गहै।
बाकी कहूँ मन नहिं आनै, निराकारकी ओर रहै॥
धनको पाय भया धनवंता, निरधन मिल उन बुरा कहै।
बाकी कबहूँ न मनमें लावै, अपने धन सँग जाय रहै॥
पतिको पाय भई पतिबरता, बहु बिभचारिन हाँस करै।
वाके संग कबहूँ नहिं जावै, पतिसे मिलकर चिता जरै।
दरिया राम भजै जो साधू, जगत भेख उपहास करै।

वाका दोष न अन्तर आनै, चढ़ (नाम) जहाज भौसागर तरै।

५२

घट में तीरथ क्यों न नहावो।
इत-उत डोलो पथिक बनें ही, भरमि-भरमि क्यों जनम गँवावो
गोमती कर्म सुकारथ कीजै, अधरम-मैल छुटावो।
सील-सरोवर हितकारि न्हैये, काम-अगिनकी तपन बुझावो
रेवा सोई छिमाको जानो, तामें गोता लीजै।
तनमें क्रोध रहन नहिं पाबै, ऐसी पूजा चित दै कीजे॥
सत जमुना संतोष सरस्वती गंगा धीरज धारो।
झूँठ पटकि निर्लोभ होयकरि, सबहीं बोझा सिर सूँ डारो ॥
दया तीर्थ कर्मनासा कहिये, परसै बदला जावै।
चरनदास सुकदेव कहत है, चौरासीमें फिर नहिं आवै॥

५३

ना मन्दिरमें, ना मसजिदमें
ना गिरजेके आस-पास में।
ना पर्वतपर, ना नदियोंमें,
ना घर बैठे, ना प्रवासमें।
ना कुंजोंमें, ना उपवनके
'शान्ति-भवन' या 'हुख-निवास' में।

ना गानेमें, ना बाजेमें,

ना आँसूमें नहीं हासमें।

ना छन्दोंमें, ना प्रबन्धमें,

अलंकार या अनुप्रासमें।

खोज ले कोई, राम मिलेंगे,

दीन-जनों की भूख-प्यासमें।

५४

हो रसिया, मैं तो शरण तिहारी।

नहिं साधन बल बचन चातुरी,

एक भरोसो चरणे गिरिधारी॥

कडुइ तुंबरिया मैं तो नीच भूमिकी

गुण-सागर पिया तुम हि सँवारी॥

मैं अति दीन बालक तुम सरना

नाथ न दीजे अनाथ बिसारी॥

निज-जन जानि सँभालोगे प्रोतम

प्रेमसखी नित जाऊँ बलिहारी॥

५५

उठ जाग मुसाफिर भोर भई

अब रैन कहाँ जो सोवत है॥

जो सोवत है सो खोवत है

जो जागत है सो पावत है॥

टुक नींदसे अँखियाँ खोल जरा,

ओ गाफिल, रबसे ध्यान लगा।

यह प्रीत करमकी रीत नहीं,

रब जागत है तू सोवत है॥

अय जान, भुगत करनी अपनी,

ओ पापी, पापमें चैन कहाँ?

जब पापकी गठरी सीस धरी,

फिर सीस पकड़ क्यों रोवत है ?

जो काल करे सो आज कर ले,

जो आज करे सो अब कर ले।

जब चिड़ियन खेती चुगि डारी,

फिर पछताये क्या होवत है ?॥

५६

अगर है शौक मिलने का, तो हरदम लौ लगाता जा।

जलाकर खुदनुमाईको, भसम तनपर लगाता जा॥

पकड़कर इश्ककी झाड़ू सफा कर हिज्र-ए दिलको।
दुईकी धूलको लेकर, मुसल्ले पर उड़ाता जा॥
मुसलला छोड़, तसबी तोड़, किताबें डाल पानीमें।
पकड़ दस्त तू फरिश्तोंका, गुलाम उनका कहाता जा ॥
न मर भूखा, न रख रोजा, न जा मस्जिद, न कर सजदा।
वजूका तोड़ दे कूजा, शराबे-शौक पीता जा॥
हमेशा खा, हमेशा पी, न गफलतसे रहो इकदम।
नशेमें सैर कर अपनी, खुदीको तू जलाता जा॥
न हो मुल्ला, न हो वम्मन, दुईकी छोड़कर पूजा।
हुक्म है शाह कलन्दरका, 'अनलहक' तू कहाता जा ॥
कहे मंसूर मस्ताना, हक मैंने दिलमें पहचाना।
वही मस्तोंका मयखाना, उसीके बीच आता जा॥

५७

है बहारे बाग दुनिया चंद रोज!
देख लो इसका तमाशा चंद रोज॥
ऐ मुसाफिर ! कूच का सामान कर।
इस जहाँ में है बसेरा चंद रोज॥
पूछा लुकमाँसे, जिया तू कितने रोज!
दस्ते हसरत मलके बोला 'चंद' रोज॥
बाद मदफन कब्र में बोली कजा

अब यहाँपे सोते रहना चंद रोज॥

फिर तुम कहाँ औ मैं कहाँ, ऐ दोस्तो!

साथ है मेरा तुम्हारा चंद रोज॥

क्यों सताते हो दिले बेजुर्म को।

जालिमो, है ये जमाना चंद रोज॥

याद कर तू ऐ नजीर कवरों के रोज।

जिन्दगी का है भरोसा चंद रोज॥

५८

अजब तेरा कानून देखा, खुदाया!

जहाँ दिल दिया फिर वहीं तुझको पाया॥

न याँ देखा जाता है मन्दिर औ' मसजिद।

फकत यह कि तालिब सिदक दिल से आया॥

जो तुझपै फिदा दिल हुआ एक बारी।

उसे प्रेमका तूने जलवा दिखाया॥

तेरी पाक सीरतका आशिक हुआ जो।

वही रंग रँगा फिर जो तूने रँगाया॥

है गुमराह, जिस दिलमें बाकी खुदी है।

मिला तुझसे जिसने खुदी को गँवाया।

हुआ तेरे विश्वासीको तेरा दरसन।

गदाको दुरे बेबहा हाथ आया।

५९

दुनियाँ भरम भूल बौराई।

आतम राम सकल घट भीतर जाकी सुद्ध न पाई॥

मथुरा काशी जाय द्वारिका, अरसठ तीरथ न्हावै।

सतगुरु बिना सोधा नहिं कोई, फिर फिर गोता खावै ॥

चेतन मूरत जड़को सेवै, बड़ा थूल मत गैला।

देह अचार किया कह होई, भीतर है मन मैला॥

जप तप संजम काया कसनी, सांख्य जोग ब्रत दाना।

यातें नहीं ब्रह्म से मेला, गुनहर करम बँधाना॥

बकता ह्वै ह्वै कथा सुनावै, स्रोता सुन घर आवै।

ज्ञान ध्यान की समझ न कोई कह सुन जनम गँवावै ॥

जन दरिया, यह बड़ा अचम्भ कहै न समझै कोई।

भेड़ पूँछ गहि सागर लाँघे, निश्चय डूबै सोई॥

मराठी भजन

६०

जेथें जातों तेथें तू माझा सांगाती
चालविसी हातीं धरूनिया।
चालों वाटे आम्हीं तुझाचि आधार
चालविसी भार सवें माझा।
बोलों जातां बरळ करिसी तें नीट
नेली लाज धीट केलों देवा॥
अवधे जन मज झाले लोकपाळ
सोईरे सकळ प्राणसखे।
तुका म्हणे आतां खेळतों कौतुकें
झालें तुझे सुख अंतर्बाहीं॥

६१

पापाची वासना नको दावूं डोळां,
त्याहुनी अंधळा वराच मी।
निदेचें श्रवण नको माझे कानी,
बधिर करोनि ठेवीं देवा।
अपवित्र वाणी नको माया मुखा,
त्याजहुनि मूका बराच मी।
नको मज कधीं परस्त्री-संगति,

जनांतूनी माती उठतां भली।

तुका म्हणे मज अवध्याचा कंटाळा,

तू एक गोपाळा आवडसी॥

६२

कन्या सासुरासी जाए। मागें परतोनि पाहे

तैसे झालें माइया जिवा । केव्हां भेटसी केशवा

चुकलिया माये। बाळ हुरुहुरु पाहे

जीवना वेगळी मासोळी । तैसा तुका तळमळी ।

६३

घेई घेई माझे वाचे। गोड नाम विठोबाचें

डोळे तुम्ही घ्यारे सुख । पाहा विठोबाचें मुख

तुम्हो आइकावे कान। माइया विठोबाचे गुण

मना तेथें धांव घेई। राहें विठोबाचे पायीं

तुका म्हणे जीवा। नको सोडूं या केशवा

६४

पुण्य पर-उपकार। पाप ते पर-पीडा।

आणिक नाहीं जोडा। दुजा यासी।।

सत्य तोचि धर्म। असत्य तें कर्म॥

आणिक हे वर्म। नाहीं दुजें॥

गति तेचि मुखीं। नामाचें स्मरण।

अधोगति जाण। विन्मुखता॥

संतांचा संग। तीचि स्वर्गवास।

नर्क तो उदा। अनर्गळ ॥

तुका म्हणे उघड़ें। आहे हित घात।

जयाचें उचित। करा तैसें॥

६५

परदारा परधन। परनिंदा परपीडन।

सोंडोनि, भजन हरीचें करा॥

सर्वाभूतीं कृपा । संताची संगति।

मग नाहीं पुनरावृत्ति । जन्म-मरण॥

नाभा म्हणें न लगे। साधन आणिक।

दिधली मज भाक। पांडुरंगें॥

६६

रूप पाहतां लोचनी। सुख जालें वो साजणी

तो हा विठ्ठल बरवा। तो हा माधव बरवा

बहुतां सुकृतांची जोडी।म्हणुनि विठ्ठलीं आवडी

सर्व सुखाचें आगर। बाप रखुमादेवी-वर

६७

पक्षी अंगणीं उतरती। ते कां गुंतोनि राहती
तैसे असार्वे संसारी। जोंवरी प्राचीना ची दोरी
वस्तीकर वस्ती आला। प्रात:काळी उठोनि गेला
शरण एका जनार्दन। ऐसे असतां भय कवण

६८

कनक कांता न ये चित्ता, तो चि परमाथा पुरता।
हें चि एक सत्य सार, वायां व्युत्पत्तीचा भार।
वाचा सत्यत्वें सोंवळी, येर कविता ओंवळी।
जन तेचि जनार्दन, एक जनार्दनी भजन॥

६९

हरि आला रे हरि आला रे,
संत-संगें ब्रह्मानंदु झाला रे ॥
हरि येथें रे हरि तेथें रे, हरी विण न दिसे रितें रे।
हरि आदि रे हरि अंतीं रे, हरि व्यापक सर्वा भूतीं रे।
हरि-जाणा रे हरि वाना रे,

बाप रखुमा देवी-वरु राणा रे ।

७०

धांव रे रामराया, किति अंत पहासी।
प्राणांत मांडियेला, न ये करुणा कैसो॥
पाहीन धणिभरीं, चरण झाडीन केशीं।
नयन शिणले बा, आतां केधवां येसी॥
मी पण-अभिमानें, अंगि भरिला ताठा।
विषय कर्दमांते, लाज नाहीं लोळतां।
किळस उपजे ना, ऐसें झालें बा आतां॥
मारुति-स्कंधभागी, शीघ्र वैसोनि यावें।
राघवें वैद्य-राजें, कृपा-औषध द्यावें।
दयेचें पद्म-हस्त, माझे शिरीं ठेवावें॥
या भवीं रामदास, थोर पावतो व्यथा।
कौतुक पाहतोसी, काय जानकी-कांता।
दयाळा दीन-बंधो, भक्त-वत्सला ताता॥

७१

अशाश्वत संग्रह कोण करी ?
कोण करी घर सोपे माड्या, झोंपडि हेचि बरी।
चिरगुट चिंध्या जोडुनि कंथा गोधडी हेचि बरी॥

नित्य नर्वे जें देइल माधव भक्षूं तेचि घरी।

अमृत म्हणे मज भिक्षा डोहले येति अशा लहरी॥

गुजराती भजन

७२

वैष्णव जन तों तेने कहीये, जे पीड पराई जाणे रे,
परदु:खे उपकार करे तोये, मन अभिमान न आणे रे।
सकळ लोकमां सहुने वंदे, निंदा न करे केनी रे,
वाच काछ मन निश्चळ राखे, धन धन जननी तेनी रे।
समदृष्टि ने तृष्णा त्यागी, परस्त्री जेने मात रे,
जिह्वा थकी असत्य न बोले, परधन नव झाळे हाथ रे।
मोह माया व्यापे नहि जेने, दृढ़ वैराग्य जेना मनमां रे,
रामनामशुं ताळो लागी, सकळ तीरथ तेना तनमां रे।
वणलोभी ने कपटरहित छे, काम क्रोध निवार्या रे,
भणे नरसैयो तेनुं दरसन कवतां, कुळ एकोतेर तार्या रे।

७३

अखिळ ब्रह्मांडमां एक तु श्रीहरि,
जूजवे रूप अनंत भासे;
देहमां देव तुं, तेजमां तत्त्व तुं
शून्यमां शब्द थई वेद वासे।
पवन तुं, पाणी तुं, भूमि तुं, भूधरा,
वृक्ष थई फूली रह्यो आकाशे;
विविध रचना करी अनेक रस लेवाने

शिव थकी जीव थयो ए ज आशे।

वेद तो एम वदे, श्रुति-स्मृति साख दे—

कनक कुण्डल विषे भेद न्होये;

घाट घडिया पछी नामरूप जूजवां,

अंते तो हेमनुं हेम होये।

वृक्षमां बीज तुं, बीजमां वृक्ष तुं,

जोऊं पटंतरो ए ज वासे;

भणे नरसैयो ए मन तणी शोधना,

प्रीत करूं प्रेमथी प्रगट थाशे।

७४

ज्यां लगी आतम-तच्व चीन्यो नहि

त्यां लगी साधना जूठी

मानुषा-देह तारो एम एळे गयो

मावठानी जेम वृष्टि वूठी

शुं थयुं स्नान पूजा ने सेवा थकी;

शुं थयुं घेर रही दान दीधे ?

शुं थयुं धरी जटा भस्मलेपन कर्ये,

शुं थयुं बाल लोचंन कीधे ?

शुं थयुं तपने तीरथ कीधा थकी,

शुं थयुं माळ ग्रही नाम लीधे ?

शु थयुं तिलकने तुळसी धार्या थकी,
शु थयुं गंगजल पान कीधे ?
शुं थयुं वेद व्याकरण वाणी वद्ये,
शुं थयुं रागने रंग जाण्ये ?
शुं थ्युं खट दरशन सेव्या थकी,
शुं थयुं वरणना भेद आण्ये ?
ए छे परपंच सहु पेटभरवा तणा
आत्माराम परिब्रह्म न जोयो;
भणे नरसैयो के तत्त्व-दर्शन विना,
रत्न-चिंतामणि जन्म खोयो।

७५

वैष्णव नथी थयो तुं रे, शीद गुमानमां घूमे,
हरिजन नथी थयो तु रे ।
हरिजन जोई हैडुं नव हरखे, द्रवे न हरिगुण गातां,
काम धाम चटकी नथी पटकी, क्रोधे लोचन रातां ।
तुज संगे कोई वैष्णव थाये, तो तुं वैष्णव साचो,
तारा संगनो रंग न लागे तांहां लगी तुं काचो।
परदु:ख देखी हृदे न दाझे, परनिंदा नथी डरतो,
बहाळ नथी विट्ठलशुं साचुं हठे न हुँ हुँ करतो।
परोपकारे प्रीत न तुजने, स्वारथ छूट्यो छे नहीं,

कहेणी तेवी रहेणी न मळे, काहां लख्युं एम कहेनी ।
भजवानी रुचि नथी मन निश्चे, नथी हरिनो विश्वास ।
जगत तणो आशा छे जाहां लगी, जगत गुरु, तुं दास।
मन तणो गुरु मन करेश तो, साचौ वस्तु जडशे,
दया दुःख के सुख मान पण साचुं कहेवुं पडशे।

७६

हरि नो मारग छे शूरानी, नहिं कायरनु- काम जोने;
परथम पहेलुं मस्तक मूकी, वलती लेवूं नाम जोने। ध्रु०
सुत वित दारा शीश समरपे, ते पामे रस पीवा जोने;
सिन्धु मध्ये मोती लेवा मांहो पड्या मरजीता जोने।
मरण आँगपें ते भरे मूठी, दिलनी दुग्धा वाभे जोने;
तीरे ऊभा जुए तमासो, ते कोडी नव पामे जोने।
प्रेमपंथ पावकनी ज्वाळा, भाळी पाछा भागे जोने;
मांही पड्या ते महासुख माणे, देखनारा दाझे जोने।
माथा साटे मोधी वस्तु, सांपडवी नहीं सहेल जोने;
महापद पाम्या ते मरजीवा, मूकी मननी मेल जोने।
राम-अमलमां राता माता पूरा प्रेमी परखे जोने;
प्रीतम ना स्वामीनी लीला ते रजनीनंद नरखे जोने।

७७

त्याग न टके रे वैराग बिना, करीए कोटि उपाय जी;
अन्तर ऊंडी इच्छा रहे, ते केम करीने तजाय जी ? ध्रु०
वेष लीधो वैरागनो, देश रही गयो दूर जी;
ऊपर बेष अच्छो बन्यो, मांही मोह भरपूर जी।
काम क्रोध लोभ मोहनुं ज्यां लगी मूळ न जाय जी;
संग प्रसंगे पांगरे, जोग भोगनो थाय जी।
उष्ण रते अवनी विषे बीज नव दीसे बहार जी;
धन बरसे बन पांगरे, इन्द्रिय विषय आकार जी।
चमक देखीने लोह चळे, इन्द्रिय विषय संजोग जी;
अणभेट्ये रे अभाव छे, भेट्ये भोगवशे भोग जी।
ऊपर तजे ने अन्तर भजे, एम न सरे अरथ जी;
वणस्यो रे वर्णाश्रम थकी, अन्ते करशे अनरथ जी।
भ्रष्ट थयो जोग-भोगथी, जेम बगडयुं दूध जी;
गयुं घृत मही माखण थकी, आपे थशुयुं रे अद्ध जी।
पळमां जोगी ने भोगी पळमां पळमां गृही ने त्यागी जी;
निष्कुळानन्द ए नरनो, वणसमज्यो वैराग जी।

७८

मारो नाड तमारे हाथ हरि संभाळजो रे
मुजने पोतानी जाणीने प्रभुपद पाळजो रे!

पथ्यापथ्य नथी समजातुं, दु:ख सदैव रहे ऊभरातुं,

मने हशे शुं थातुं, नाथ निहाळजो रे!

अनादि आप वैद्य छो साचा,

कोई उपाय विषे नहि काचा,

दिवस रह्या छे टांचा; वेळा वाळजो रे।

विशेश्वर शुं हजी विसारो, बाजी हाथ छतां कां हारो ?

महा मूँझारो मारो नटबर टाळजो रे!

केशव हरि मारूं शुं थाशे; घाण बळयो शुं गढ़ घेराशे ?

लाज तमारी जाशे भूधर भाळजो रे!

७९

मंगल मंदिर खोलो दयामय।

मंगल मंदिर खोळो !

जीवन-वन अति वेगे वटाव्युं

द्वार ऊभो शिशु भोळो,

तिमिर गयुं ने ज्योति प्रकाश्यो,

शिशुने उरमां लोलो।

नाम मधुरं-तम रट्यो निरंतर,

शिशु सह प्रेमे बोळो।

दिव्यतृषातुर आव्यो बालक

प्रेम-अमीरस ढोळो!

८०

थाके न ताके छतांये हो मानवी, न लेजे विसामो।
ने झूझजे एकला बांये, हो मानवी ! न लेजे विसामो।
तारे उल्लंघवानां मारग भुलामणां,
तारे उद्धारवानां जीवन दयामणा॥
हिम्मत न हारजे तुं क्यांये, हो मानवी ! न लेजे विसामो !
जीवनने पंथ जतां ताप थाक लागशे,
वधती विटम्बणा सहतां तुं थाकशे॥
सहतां संकट ए बधां ये, हो मानवी ! न लेजे विसामो ।
जाजे वटावी तुज आफतनो टेकरो,
आगे आगे हशे वणखेड्यां खेतरो॥
खंते खेडे ए बधां छे, हो मानवी! न लेजे विसामो ।
झांखा जगतमां एकलो प्रकाशजे,
आवे अंधार तेने एकलो विदारजे॥
छोने आ आयखु हणाये, हो मानवी ! न लेजे विसामो !
लेजे विसामो न क्यांये, हे मानवी ! देजे विसामो।
तारी हैया बरखडीने,छांये, हो मानवी ! देजे विसामो ॥

८१

पाणी आपने पाय, भलुं भोजन तो दीजे;
आवी नमावे शीश, दंडवत कोडे कीजे।

आपण घासे दाम, काम महोरोनु करीये;

आप उगारे प्राण, ते तणा दुःखमां मरीए।

गुण केडे तो गुण दश गणो, मन, वाचा कर्मे करी;

अवगुण केडे जे गुण करे, ते जगमां जीत्यो सही।

बंगला भजन

८२

अन्तर मम विकसित करो अन्तरतर हे,
निर्मल करो, उज्वल करो, सुन्दर करो हे!
जाग्रत करो, उद्यत करो, निर्भय करो हे,
मंगल करो; निरलस निःसंशय करो हे!
युक्त करो हे सबार संगे, मुक्त करो हे बंध,
संचार करो सकल कर्मे शान्त तोमार छंद !
चरण-पद्मे मम चित्त निष्पंदित करो हे,
नंदित करो, नंदित करो, नंदित करो हे!

८३

तुमि बंधु, तुमि नाथ, निशिदिन तुमि आमार,
तुमि सुख, तुमि शान्ति, तुमि हे अमृत पाथार।
तुमिइ तो आनन्दलोक, जुडाओ प्राण नाशो शोक;
तापहरण तोमार चरण, असीम शरण दीनजनार।।

८४

जेथाय थाके सबार अधम दीनेर हते दीन,
सेइखाने जे चरन तोमार राजे,

सबार पिछे, सबार नीचे, सब-हारादेर माझे।
जखन तोमाय प्रणाम करि आमि,
प्रणाम आमार कोन खाने जाय थामि,
तोमार चरण जेथाय अपमानेर तले,
सेथाय आकार प्रणाम नामे ना जे;
सबार पिछे, सबार नीचे, सब-हारादेर माझे।
अहंकार तो पाय ना नागाल जेथाय तुमि फेरो,
रिक्त-भूषण दीन दरिद्र साजे,
सबार पिछे, सबार नीचे, सब-हारादेर माझे।
संगी हये आछ जेथाय संगीहीनेर घरे,
सेथाय आमार हृदय नामे ना जे
सबार नीचे, सब-हारादेर माझे।

८५

आमार माथा नत करे दाओ हे
तोमार चरण-धूलार तले।
सकल अहंकार हे आमार डुबाओ चोखेर जले।
निजेरे करिते गौरव-दान, निजेरे केवलि
करि अपमान,
आपनारे शुधु घेरिया घेरिया गुरे मरि पले पले।
सकल अहंकार हे आमार डुबाओ चोखेर जले।

आमारे जे ना करि प्रचार आमार आपन काजे।

तोमारि इच्छा करो हे पूर्ण आमार जीवन माझे ।

याचि हे तोमार परम शान्ति, पराने तामान

परम कान्ति,

आमारे आड़ाल करिया दाँड़ाओ हृदय-पद्म-दले ।

सकल अहंकार हे आमार डुबाओ चोखेर जले।

उड़िया भजन

८६

तुमरि इच्छा पूर्ण हे, हेउ पूर्ण हे,
हेउ पूर्ण हे हरि।
मोर सकल कामना, सकल वासना तव पदे।
हेउ चूर्ण हे हरि॥
भांगि पडु मोर मन अट्टालिका, झड़ि पडु अशा-
कुसुम कलिका।
संसार नाट सारि दिअ मोर हाट करि
दिअ शून्य हे हरि॥
रुद्ध करि दिय (मोर) इन्द्रियर गति घेनि जाअ
पुत्र कलत्र सम्पत्ति॥
शिर पाति नेबि निर्देश तुमुर, हेबि नाहिं
तिले क्षुण्णा हे हरि॥

८७

प्रेममय भगवान

प्रेममय भगवान
प्रेमिक तुमे प्रेमहिं तव श्रेष्ठ दान
प्रेमे झरा उछ बरषा धारा
जा परसे हसि उछहइ धरा

प्रेमे उएँ शशि, प्रेमे दिवाकर

प्रेम वितरे समिरण

प्रेमे शबरीर उच्छिष्ट भूंजिल

प्रेमे बिदुर अतिथि होइल

प्रेमे न चाहिंल जमुना पुलिन

प्रेम गाई राधा नाम

प्रेम पूर्ण कर मोर आचरण

भजन बचन मनन स्मरण

प्रेम वय सिना ए सारा संसार

प्रेम सिना सत्य शाशवत दान।

सिन्धी भजन

“

तेरा मकान आला जित्थे कित्थे वसी भी तूं !

हलो तो आसमान वेखूं आगा हली पसूं।

आसामान मिड्योंहि तारा तारन जी चंड भी तूं॥

हलो तो बाजार वेखूं आगा हली पसूं।

बाजार मिड्योहि आदम, आदम, जो दम भी तूं॥

हलो तो मन्दिर वेखूं आगा हली पसूं।

मन्दिर मिड्योहि मूरत, मूरत, जो सूरत भी तूं॥

हलो तो किश्ती वेखूं, आगा हली पसूं।

दरिया मिड्योहि लहरू लहरन जो लाल भी तूं॥

हलो तो किश्ती वेखूं, आगा हली पसूं।

किश्ती में रहेथो राहिब, राहिब जो साहिब भी तूं॥

८९

अंग्रेजी भजन

टेक माई लाइफ, एण्ड लैट इट बी
कॉन्सीक्रेटेड, लार्ड ! टु दी;
टेक माई हैण्ड्स, लैट दैम मूव
एट दि इमपल्स, आफ दाई लव
टेक माई मोमेण्ट्स एण्ड माई डेज,
लैट दैम फ्लो इन सीजलैस प्रेज,
टेक माई फीट, एण्ड लैट दैम बी
स्विफ्ट एण्ड बिउटीफुल फार दी।
टेक माई वायेस, एण्ड लैट मी सिंग
आलवेज, ओनली,फार माई किंग,
टेक माई लिप्स, एण्ड लैट दैम बी
फिल्ड विथ मेसेजेज फ्राम दी,
टेक माई सिलवर एण्ड माई गोल्ड,
नौट ए माइट वुड आई विदहोल्ड।
टेक माई इंटेलैक्ट एण्ड यूज
एवरी पावर एज दाऊ शैल्ट चूज,
टेक माई विल, एण्ड मेक इट दाइन,
इट शैल बी नो लांगर माइन।
टेक माई हार्ट, इट इज दाइन ओन;
इट शैल बी दाई रायल थ्रोन।

टेक माई लव, माई लार्ड, आई पोर

एट दाई फीट इट्स ट्रेजर-स्टोर

टेक माईसैल्फ, एण्ड आई विल बी

एवर, ओनली, आल फार दी।

हिन्दी रूपान्तर

लो प्रभु मेरा यह जीवन अर्पित है तुम्हारे चरणों में ।

लो मेरे ये हाथ, तुम्हारे प्रेम का ही संदेश ये वहन करें।

लो मेरे जीवन के सारे क्षण!

इनमें मैं सदैव तुम्हारी स्तुति ही गाता रहूँ ।

लो मेरे ये पैर,

तुम्हारे आदेश का पालन करने के लिए ही

वे सतत सत्वर चलते रहें।

लो मेरी यह वाणी;

इससे मैं सदैव केवल तुम्हारे ही गीत गाया करूँ।

लो मेरे ये होठ;

हर समय इनसे तुम्हारा ही सन्देश निकला करे!

लो मेरा सारा स्वर्ण भंडार;

सारी दौलत तुम्हारे चरणों पर न्योछावर है !

मुझे एक दमड़ी न चाहिए!

लो मेरी बुद्धि; जैसा चाहो इसका उपयोग करो।

लो मेरी सारी कामना

मेरी अपनी कोई इच्छा न रहे !

इसे तुम अपनी बना लो !

लो मेरा यह हृदय;

यह तो तुम्हारा ही है!

बना लो इसे अपना सिंहासन!

लो मेरा प्रेम, प्यारे प्रभु;

यह खजाना मैं तुम्हारे चरणों पर ही लुटा रहा हूँ!

अन्त में मैं, तुम मुझे ही ले लो।

'मैं तेरा हूँ; सदा तेरा रहूँगा बावफा खादिम'

* * * * *